DEV SANSKRITI: Interdisciplinary International Journal **(2015), 6, 10-15**

पातंजल योग सूत्र में अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया

असीम कुलश्रेष्ठ

सारांश

मनुष्य जीवन के गूढ़तम् रहस्यों को ज्ञात करने के लिये एवं जीवन को सार पूर्ण व्यतीत करने के लिये आध्यात्मिक ज्ञान अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है। अध्यात्म विज्ञान से मनुष्य को जीवन के उन गूढ़ रहस्यों का ज्ञान प्राप्त होता है जिसके माध्यम से मनुष्य, जीवन की जटिलतम् समस्याओं और परिस्थितियों का समाधान करने की योग्यता प्राप्त करता है। आधुनिक समय में जीवन के रहस्यों को समझने और अध्यात्म से सम्बन्धित विद्याओं को दार्शनिक और काल्पनिक कहकर नकार देने का प्रचलन बढ़ चला है। इसके अतिरिक्त अध्यात्म के नाम पर विभिन्न व्यावसायिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिये विभिन्न प्रकार के प्रपंचों का प्रचलन बढ़ता ही जा रहा है। आज के वैज्ञानिक युग में यदि अध्यात्म की वैज्ञानिकता को स्पष्ट कर अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया को जनसाधारण के समक्ष प्रस्तुत किया जाये तो संभव है कि अध्यात्म के सन्दर्भ में जो विभिन्न नकारात्मक एवं मिथ्या बातें प्रचारित हैं उसे जनसाधारण अस्वीकार करे। महर्षि पतंजलि ने अपने योग सूत्रों में सामंजस्य और उससे उपजी समग्रता का मौलिक सृजन किया है। महर्षि पतंजलि द्वारा किया गया यह प्रयास सिर्फ बौद्धिक सूत्रों का ताना–बाना भर नहीं है। वह वेदों की ऋचाओं, उपनिषद्ों की श्रुतियों के दृष्टा की भाँति क्रान्तिदर्शी प्रतीत होते हैं। महर्षि पतंजलि ने अनुभूतियों और उपलब्धियों की सर्वांगीण अभिव्यक्ति योग सूत्रों के माध्यम से दी है। महर्षि पतंजलि की दार्शनिक प्रणाली इसी सौन्दर्य के कारण दर्शनीय है क्योंकि इसमें किसी प्रणाली अथवा उसमें निहित तत्वों की न तो अवहेलना है न ही उपेक्षा। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य जनसाधारण को पांतजल योग सूत्र में वर्णित अध्यात्म के वास्तविक स्वरूप से अवगत कराने के साथ–साथ अध्यात्म के वैज्ञानिक स्वरूप एवं अध्यात्म की वैज्ञानिकता को अवगत कराना है।

कूट शब्द : अध्यात्म, दार्शनिक प्रणाली, योगसूत्र एवं वैज्ञानिक प्रक्रिया।

मानव जीवन इस संसार का सर्वोत्कृष्ट वरदान है क्योंकि मनुष्य योनी में ही अधिकतम विकास की पूर्ण संभावनाएँ विद्यमान है। वास्तव में मनुष्य ईश्वर का ही अंश है। इसलिए ईश्वर की सभी विभूतियाँ प्रत्येक मनुष्य में बीज रूप में विद्यमान है जिन्हें आध्यात्मिक प्रणालियों द्वारा जाग्रत, पोषित एवं पुष्पित किया जा सकता है। ऐसे बहुमूल्य सयंत्र का सुसंचालन एवं सदुपयोग यदि ज्ञात न हो तो उसे एक दुर्भाग्य ही कहा जायेगा। यह विचार निश्चय ही भ्रम पूर्ण है कि धन–वैभव, मान सम्मान तथा पद–प्रतिष्ठा पा लेने पर जीवन सफल एवं सार्थक हो जाता है। यह उन उपलब्धियों की तुलना में तुक्ष एवं नगण्य है जो अध्यात्म के प्रयोगकर्ता को हस्तगत होती हैं। अध्यात्म से प्राप्त उपलब्धियों के अतिरिक्त संसार की कोई उपब्धियाँ मनुष्य को छुद्रता से विराट की ओर और तुक्षता से उच्चता की ओर नहीं ले जा सकती है। स्वामी विवेकानंद अध्यात्म की महत्ता को स्पष्ट करते हुये वर्णन करते हैं कि 'जिन्होंने आभ्यन्तरिक शक्तियों को अविष्कार करके उन्हें इच्छानुसार चलाना सीख लिया है, वे संपूर्ण प्रकृति को वश में कर सकते हैं। संपूर्ण जगत को वशीभूत करना और सारी प्रकृति पर अधिकार प्राप्त करना– इस बृहत कार्य को ही योगी अपना कर्तव्य समझते हैं। वे एक ऐसी अवस्था में जाना चाहते हैं, जहाँ, हम जिन्हें 'प्रकृति के नियम' कहते हैं, वे उन पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकते, जिस अवस्था में वे उन सबको पार कर जाते हैं। ऐसी अवस्था में वे आभ्यन्तरिक और बाह्य समस्त प्रकृति पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेते हैं' (विवेकानंद, 2000, पृ. 42–43)।

महर्षि पतंजलि की प्रणाली की रचना, उससे की गयी समग्र सत्य की अनुभूति और इसकी परिपूर्ण ज्ञान के रूप में अभिव्यक्ति अपने में लयबद्ध संगीत है। महर्षि पतंजलि अपने सूत्रों में मन की एकाग्रता हेतु साधनों के वर्णन के साथ ही मन के एकाग्रता प्रदेश में कितने प्रकार के भिन्न–भिन्न कार्य हो रहे हैं, उनका ज्ञान प्राप्त करना, और तत्पश्चात उनसे साधारण सत्यों को निकालकर उनसे अपने एक सिद्वान्त पर उपनीत होकर यथेष्ट परिणाम की प्राप्ति करना किस प्रकार संभव है इसका वर्णन अत्यन्त सरलता एवं सहजता से करते हैं।

वैज्ञानिक अनुसन्धान की कसौटी पर पातंजल योग सूत्र

वर्तमान युग में जहाँ विभिन्न महापुरूषों ने अध्यात्म को तर्क, तथ्य एवं प्रमाण की कड़ी कसौटी पर कस उसे वैज्ञानिक आधार प्रदान किया है; वहीं प्राचीन भारत में महर्षि पतंजलि ने इस कार्य को अपने ढंग से सम्पन्न किया था। महर्षि पतंजलि के सन्दर्भ में ओशो वर्णन करते हैं कि ''मनुष्यता के इतिहास में धर्म को पहली बार विज्ञान की अवस्था तक लाया गया। पतंजलि ने धर्म को मात्र नियमों का विज्ञान बना दिया''(ओशो, 1998, पृ.6)। उनकी पहुँच एक वैज्ञानिक मन की है, लेकिन उनकी यात्रा भीतरी है (ओशो, 1998, पृ.213)। प्रणव पंडया महर्षि पतंजलि की विशेषताओं का

वर्णन करते हुये कहते हैं कि ''महर्षि पतंजलि एक गणितज्ञ, एक तर्कशास्त्री की भांति बात करते हैं, वे अरस्तु की भांति बात करते हैं और वे हैं हेराक्लाइट्स जैसे रहस्यदर्शी और अन्तर्जगत के सबसे बडे वैज्ञानिक है'' (पंड्या, 2006, पृ.6–7)। महर्षि पंतजलि कृत पांतजल योग सूत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण यौगिक ग्रन्थ है, योग के क्षेत्र में पांतजल योग सूत्र की उपादेयता सर्वविदित है। महर्षि पतंजलि कि विशेषता उनके हृदय व मस्तिष्क पर समान अधिकार है क्योंकि हृदय के माध्यम से जहाँ भाव जगत की अन्तर यात्रा प्रारम्भ की जाती है वहीं मस्तिष्क की प्रखर सामर्थ्य द्वारा उस अकथनीय की अभिव्यक्ति करता है। सम्भवतः उनमें प्रखर–प्रज्ञा एवं सजल–श्रद्धा का अद्‌भुत समन्वय रहा हो।

वैज्ञानिक अनुसंधान के लक्ष्य को हम बिन्दुबार महर्षि पतंजलि के योग सूत्रों के सन्दर्भ में इस प्रकार समझ सकते हैं– (1) महर्षि पतंजलि अपने योग सूत्रों की इस प्रकार व्याख्या प्रस्तुत करते हैं कि उस व्याख्या से उस विषय का पूर्ण परिचय प्राप्त हो जाता है। (2) वह व्यक्ति के चेतनात्मक स्तर के अनुसार साधना का उपाय प्रस्तुत करते हैं जिसके आधार पर परिणामों के सन्दर्भ में पूर्वकथन किया जा सके। (3) वह अपने सम्प्रत्ययों और सम्प्रत्ययात्मक योजनाओं को इस प्रकार विकसित और प्रस्तुत करते हैं कि उनके अनुसन्धानों से प्राप्त जानकारी कम से कम शब्दों में भाषाबद्ध होती है। (4) वह पूर्व प्रचलित सम्प्रत्ययों के साथ नवीन विचारधारा का समन्वय कर मितव्ययिता के नियम का अनुसरण करते हैं। (5) चेतनात्मक स्तर से समान व्यक्तियों के लिए पातंजल योग सूत्र प्राप्त ज्ञान की वस्तुनिष्ठता का पालन करते हैं। (6) चेतना को सामान्यतः शरीर, मन, बुद्धि, भावना, चित्त और आत्मा के स्तर में विभाजन से समझा जा सकता है। (7) महर्षि पतंजलि शरीर, मन, बुद्धि, भावना, चित्त और आत्मा के स्तरों को प्रभावित करने के लिए उपाय प्रस्तुत करते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान के लक्ष्य को महर्षि पतंजलि के योग सूत्रों के सन्दर्भ में समझने के पश्चात पातंजल योग सूत्र में अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया को स्पष्ट कर सकते हैं।

वैज्ञानिक प्रक्रिया एवं उपागम

वैज्ञानिक वस्तुनिष्ठ, वैध और मितव्ययिता सम्पन्न ज्ञान प्राप्त करने के लिए अनुसन्धान की जो प्रक्रिया अपनाता है, उसका एक सुनिश्चित उपागम होता है। इस उपागम का पर्याप्त विस्तृत विवरण ड्यूबी (1933) ने दिया है, और उस विवरण को कार्लिंजर ने अपने ढाँचे में ढाल कर चार अवस्थाओं में बाँटा है– समस्या–बाधा–विचार, परिकल्पना, तर्कना–निगमन और प्रेक्षण–परीक्षण–प्रयोग (त्रिपाठी, 1995, पृ.9–10)। दी ग्रूत (1969) ने वैज्ञानिक उपागम को इन्द्रियानुभविक चक्र का नाम दिया है और कहा है कि इन्द्रियानुभविक चक्र वैज्ञानिक प्रक्रियाओं का विशिष्ट लक्षण है। इस चक्र के अन्तर्गत उसने पाँच अवस्थाओं का विवेचन किया है जिसको हम इस प्रकार समझ सकते हैं– (1) प्रथम अवस्था प्रेक्षण की होती है जिसके अन्तर्गत इन्द्रियानुभविक सामिग्री का संग्रह, वर्गीकरण तथा परिकल्पनाओं की रूपरेखा का निर्माण होता है। (2) द्वितीय अवस्था में आगमनात्मक प्रक्रम का आश्रय लेते हुए परिकल्पनाओं का प्रतिपादन किया जाता है। (3) तृतीय अवस्था में निगमनात्मक चिन्तन के माध्यम से परिकल्पनाओं से विशिष्ट परिणामों की निष्पत्ति इस तरह की जाती है कि इनको परिक्षणीय कथनों के रूप में प्रस्तुत किया जा सके। (4) चतुर्थ अवस्था परीक्षण की है। इसमें नयी इन्द्रियानुभविक सामिग्रियों के आधार पर परिकल्पनाओं की सत्यता की जाँच की जाती है और यह देखा जाता है कि परिकल्पना के आधार पर किये गये पूर्वकथन इन्द्रियानुभविक स्तर पर सही सिद्ध होते हैं या नहीं। (5) पाँचवीं अवस्था में परीक्षण से प्राप्त परिणामों का मूल्यांकन किया जाता है और यह देखा जाता है कि प्राप्त परिणामों से उपस्थित परिकल्पना सत्यापित होती है या नहीं (त्रिपाठी, 1995, पृ.10–11)। यहाँ उपरोक्त वैज्ञानिक विधि और प्रक्रिया के चरणों को आधार मानकर पातंजल योग सूत्र में अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया के चरणों को स्पष्ट करेगें–

पातंजल योग सूत्र में निहित अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया

बौद्धिक विवेचन कितना ही तर्कपूर्ण क्यों न हो, पर उसकी सार्थकता तभी है, जब वह प्रयोग की कसौटी पर स्वयं को खरा प्रमाणित करे। अपने एकांगिपन के बावजूद वैज्ञानिक प्रणाली इसी विशेषता के कारण प्रामाणिकता के शिखर पर जा पहुँची है। विज्ञान और प्रामाणिकता, एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं। परन्तु इसके अधूरेपन का कारण बाह्य प्रकृति को सब कुछ मानकर अन्तःप्रकृति से मुख मोड़ लेना है। आध्यात्मिक प्रणाली 'सर्व खिल्विदं ब्रह्म' कहकर सर्वस्व को स्वीकृति देती है। लेकिन वैज्ञानिक प्रयोगों के अभाव ने इसे रहस्यवाद का रूप दे डाला। इस कारण आध्यात्मिक प्रणाली की प्रक्रियाएँ और निष्कर्ष दोनों रहस्य होकर रह गए। यहाँ पातंजल योग सूत्र में अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया और पातंजल योग सूत्र में अर्न्तजगत के प्रयोगों के वैज्ञानिक तत्व को स्वीकार कर समस्या का शाश्वत समाधान खोजा गया है।

विभिन्न विद्वानों द्वारा सम्पादित वैज्ञानिक प्रणाली के चरणों को यदि संकलित करने का प्रयास करें तो हम वैज्ञानिक प्रणाली को इस प्रकार समझ सकते हैं कि सर्वप्रथम शोधकर्ता के मन में पूर्व प्रचलित प्रणालियों को लेकर एक प्रश्न, समस्या या जिज्ञासा उत्पन्न होती है जिसका कारण होता है उस विषय से सम्बन्धित विभिन्न प्रचलित प्रणालियों के तथ्यों का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन। अर्थात् वैज्ञानिक प्रक्रिया के प्रारम्भिक चरण में शोधकर्ता विषय से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्र करता है और उन तथ्यों में अपूर्णता को अनुभव करता है और उस अपूर्णता को समाप्त करने

व समाधान के लिए एक समस्या रूपी प्रश्न को प्रस्तुत करता है। प्रक्रिया के अगले चरण में वैज्ञानिक चरों का वर्गीकरण कर एक उचित शोध विधि का प्रयोग करता है। इन चरों के वर्गीकरण में जिस पर प्रभाव पड़ता है और जिससे प्रभाव पड़ता है, इसके अनुरूप विभाजित किया जाता है। इस प्रक्रिया में अन्य परिस्थितियों, जिससे उसके प्रयोगात्मक चरों पर प्रभाव न पड़े इसके लिए कुछ नियंत्रित परिस्थितियों को उत्पन्न करता है। इन चरों के प्रभाव से प्राप्त परिणामों को विश्लेषित कर अपनी समस्या, जिज्ञासा का समाधान प्राप्त करता है। महर्षि पतंजलि के योगसूत्रों की वैज्ञानिकता को हम निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट कर सकते हैं–

(क) महर्षि पतंजलि द्वारा विषय का चुनाव और साहित्यिक सर्वेक्षण

महर्षि पतंजलि भी अपने शोध क्षेत्र के विषय का चयन करते हैं और निर्धारित करते हैं कि योग मार्ग पर चलने के लिए अनुशासन की आवश्यकता है जो अपने जीवन में बाह्य और अन्तः अनुशासन को समझने में सक्षम हों वही इस मार्ग पर चलें (पातंजल योग सूत्र, 1/1)।

साहित्य सर्वेक्षण के रूप में वह सम्पूर्ण प्रचलित प्रणालियों का अध्ययन करते हैं और यह स्पष्ट करते हैं कि सारा परिवर्तन, परिमार्जन और परिष्कार का रहस्य चित्त में वृत्तियों के रूप में छिपा हुआ है। वह वृत्तियों को क्लिष्ट और अक्लिष्ट के भेद से पाँच प्रकारों (प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति) में विभाजित करते हैं, (पातंजल योग सूत्र, 1/6)। क्लिष्ट अर्थात् रागद्वेषादि क्लेशों की हेतु और योग साधन में विघ्न रूप होती हैं तथा दूसरी अक्लिष्ट अर्थात् रागद्वेषादि क्लेशों को नष्ट करने वाली और योग साधन में सहायक होती हैं (तीर्थ, 2005, पृ. 155)। यदि सही नियम और उपाय के माध्यम से चित्त वृत्तियों का निरोध किया जाये तो संभव है कि चेतना का रूपान्तरण हो।

महर्षि पतंजलि भी अपने योग सूत्रों को इस प्रकार सूत्रबद्ध करते हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि उन्होंने चेतना को समग्र रूप से रूपान्तरण करने के लिए समस्त योग सूत्रों की रचना की है। वह अपने योग सूत्रों में व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों को विकसित और उन्नत बनाने के सुनिश्चित उपायों का क्रमशः वर्णन करते हैं।

(ख) महर्षि पतंजलि द्वारा वर्णित वैज्ञानिक अध्यात्म के प्रयोगकर्ता के लिए शोध की समस्या व परिकल्पना

महर्षि पतंजलि प्रथम पाद के द्वितीय सूत्र में सीधे जड़ को पकड़ते हैं। वह गीता की भाँति न कर्मों की कुशलता की बात करते हैं और न ही हठयोग की भाँति आसन, प्राणायाम की, बल्कि वह सीधे लक्ष्य और मार्ग का अन्तिम पड़ाव बताते हैं – *योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः* (पातंजल योग सूत्र, 1/2) अर्थात चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है। वे सीधे लक्ष्य को स्पष्ट करते हैं, जब जाने का अन्तिम पड़ाव पता होता है तो स्वाभाविक है कि जाने वाले की त्वरा भी उस लक्ष्य को प्राप्त करने की बढ़ जाती है। इस प्रकार वह पहले ही साध्य स्पष्ट कर देते हैं कि पाना क्या है? जाना कहाँ है? और उद्देश्य क्या है? इस प्रकार वह अध्यात्म मार्ग के पथिक के लिए एक प्रश्न, एक जिज्ञासा और लक्ष्य को प्रकट करते हैं। चित्त वृत्ति निरोध हो तो क्या होगा? क्या परिणाम प्राप्त होंगे? और जो चित्तवृत्तियों का निरोध कर लेगा उसकी क्या अवस्था होगी? वह इसको एक परिकल्पना के रूप में प्रस्तुत कर देते हैं – *तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्* (पातंजल योग सूत्र, 1/3) अर्थात् यदि चित्तवृत्ति निरोध हो गया, समस्या का समाधान प्राप्त हो गया, प्रश्न का समाधान हो गया हो तो परिकल्पना द्रष्टा का स्वरूप में अवस्थित होना स्वीकृत हो जायेगी और प्रमाणित हो जायेगा कि चित्तवृत्ति निरोध से द्रष्टा अपने स्वरूप में अवस्थित हो जाता है। इस प्रकार महर्षि पतंजलि पातंजल योग सूत्र में वैज्ञानिक अध्यात्म के प्रयोगकर्ता के लिए शोध की समस्या प्रस्तुत करते हैं– चित्त वृत्तियों का निरोध (पातंजल योग सूत्र, 1/2)। इसी प्रकार महर्षि पतंजलि पातंजल योग सूत्र में वैज्ञानिक अध्यात्म के प्रयोगकर्ता के लिए परिकल्पना प्रस्तुत करते हैं– गुणों का अपने कारण में विलीन हो जाना (पातंजल योग सूत्र, 4/34), कैवल्य की प्राप्ति (पातंजल योग सूत्र, 3/55), द्रष्टा का अपने स्वरुप में स्थित हो जाना (पातंजल योग सूत्र, 1/3)।

(ग) महर्षि पतंजलि द्वारा स्वतंत्र चर और परतंत्र चर का विवरण

अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया में आध्यात्मिक प्रकिया और वैज्ञानिक प्रणाली दोनों के तत्व सम्मिलित हैं। अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रणाली में चेतनात्मक स्तर (शरीर, प्राण, मन, चित्त और आत्मा) को परतंत्र चर के रूप में माना जा रहा है तथा साधना प्रणालियों को स्वतंत्र चर के रूप में क्योंकि; जिस प्रकार थकान का सम्बन्ध उत्पादन क्षमता से होता है उसी प्रकार आध्यात्मिक जीवन मूल्यों का प्रभाव चेतनात्मक स्तर पर पड़ता है।

साधना प्रणालियों के वैज्ञानिक प्रयोग के सन्दर्भ में यह प्रमाणित है कि जिन्होनें सत्य को जीवन में उतारा है, आचरण में ढाला है उन्ही के कार्य सफल हुए हैं। जिन्होंने जीवन भर अहिंसा व्रत का आचरण किया है, ऐसे लोगों के प्रति लोभ वैर भाव छोड़ देते हैं। जीवन में अस्तेय का व्रत जिन्होंने लिया है उन्हें धनाभाव कभी नहीं रहा। जिस प्रकार ब्रह्मचारी का वीर्यवान बनना निश्चित है उसी प्रकार सत्याचरण अपनाने वाले का ओजस्वी, तेजस्वी, मनस्वी होना स्वभाविक है (आचार्य, 1989, पृ.20)। इन साधनात्मक प्रणालियों के जीवन स्तर पर पड़ने वाले प्रभावों का प्रमाण अध्यात्म के विभिन्न शिखर पुरूषों द्वारा संपादित किये गये

आध्यात्मिक प्रयोगों से स्पष्ट होता है। पदार्थ विज्ञान के शोध क्षेत्र की सीमा उसके विषय के अनुरूप मात्र पदार्थ तक ही सीमित है परन्तु अध्यात्म विज्ञान चूँकि मानवीय चेतना से सम्बन्धित हैं अतः अध्यात्म विज्ञान के प्रयोग का क्षेत्र भी मानवीय चेतना ही होगा।

इस प्रकार महर्षि पतंजलि पातंजल योग सूत्र में अध्यात्म के प्रयोगकर्ता के लिए स्वतंत्र चर के रूप में योग की समस्त तकनीकों को प्रस्तुत करते हैं, ये योग की तकनीकें मनुष्य के सम्पूर्ण अस्तित्व को प्रभावित करने में सक्षम हैं। महर्षि पतंजलि पातंजल योग सूत्र में अध्यात्म के प्रयोगकर्ता के लिए परतंत्र चर के रूप में चित्त की समस्त वृत्तियों को प्रस्तुत करते हैं। महर्षि पतंजलि के अनुसार वर्णित चित्त की वृत्तियों का सम्बन्ध मनुष्य के सम्पूर्ण अस्तित्व शरीर, प्राण, मन, चित्त और आत्मा से है।

(घ) महर्षि पतंजलि द्वारा बाह्य चर का वर्णन

महर्षि पतंजलि स्पष्ट करते हैं कि वृत्ति होती क्या है? और यदि द्रष्टा अपने स्वरूप में स्थित न हो तो द्रष्टा का स्वरूप क्या होगा? वह इस तथ्य को स्पष्ट करते हैं कि द्रष्टा के अपने स्वरूप में न रहने पर द्रष्टा वृत्ति के सदृश ही होगा अर्थात् जैसी वृत्ति होगी वैसा ही द्रष्टा का स्वरूप होगा (पातंजल योग सूत्र, 1/4)। वह स्पष्ट करते हैं कि चेतन स्वरूप द्रष्टा यद्यपि स्वभाव से सर्वथा शुद्ध है, तो भी बुद्धि वृत्ति के अनुरूप देखने वाला है (पातंजल योग सूत्र, 2/20)।

महर्षि पतंजलि चित्त वृत्तियों के निरोध के उपाय से पूर्व चित्त की वृत्तियों की विभिन्न अवस्था भी बताते हैं और स्पष्ट करते हैं कि क्लिष्ट अवस्था में यह अध्यात्म मार्ग में बाधक होती है और अक्लिष्ट अवस्था में सहायक। महर्षि पतंजलि चित्त वृत्तियों की क्लिष्ट अवस्था (पातंजल योग सूत्र, 1/5) तथा योग अन्तराय (पातंजल योग सूत्र, 1/30–31) व पंच क्लेश (पातंजल योग सूत्र, 2/3) का मुख्य रूप से बाह्य चर के रूप में वर्णन करते हैं। पातंजल योग सूत्र में चेतना स्तर के अनुरूप प्रणालियों का वर्णन है अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति का चेतनात्मक स्तर अलग होता है। पातंजल योग सूत्र में वर्णित विभिन्न तकनीकों को विस्तृत रूप में हम इस प्रकार समझ सकते हैं–

(च) पातंजल योग सूत्र में वर्णित चेतनात्मक स्तर के आधार पर अध्यात्म की वैज्ञानिक तकनीकें और उनके लक्ष्य

अध्यात्म का प्रयोगकर्ता अपने लक्ष्य के प्रति सजग एवं चेतन होता है, उसे सांसारिक विषय वासनाओं का अधोगामी आकर्षण प्रभावित नहीं करता, जिसमें सामान्यतः अधिकांश मनुष्य उलझे रहते हैं। व्यासभाष्य के अनुसार, जिस प्रकार वर्षाऋतु में तृणांकुर के फूटने से भूमि में उसके बीज की सत्ता का अनुमान किया जाता है, उसी प्रकार मोक्ष मार्ग की चर्चा के श्रवण से जब किसी व्यक्ति का शरीर रोमांचित और नेत्रों में अश्रुपात दिखाई देने लगे, तो उससे यह अनुमान होता है कि उसके हृदय में मोक्ष संबंधी विशेष दर्शन (श्रद्धा) का बीज विद्यमान है, अर्थात् उसने पूर्व जन्म में आत्मकल्याण की साधना की है (व्यासभाष्य, 4/25)। यदि ऐसा अनुभव किसी व्यक्ति को हो तो समझना चाहिये कि उस व्यक्ति में अध्यात्म के प्रयोगकर्ता बनने की संभावनाएँ विद्यमान हैं।

साधना के क्षेत्र में कुछ लोग काफी आगे बढ़े होते हैं तो कुछ प्रारम्भिक स्थिति में विद्यमान होते हैं। कुछ ऐसे भी होते हैं जो प्रारंभिक स्थिति से थोड़ा आगे बढ़ चुके हैं, किन्तु साधना का लक्ष्य जिनके लिए अभी बहुत दूर है। इनमें से जो जितना आगे बढ़ा हुआ है, वह अपने पीछे रहने वाले साधक की अपेक्षा उत्तम है। कुमारी एवं नागोजी भट्ट ने इसी दृष्टि से साधना के अधिकारियों के तीन भेद निर्धारित किये हैं– मन्द (आरुरुक्षु), मध्यम (युंजान) और उत्तम (योगारुढ़) (कुमारी, 1981, पृ.37; नागोजी भट्टवृत्ति, 2/1) । इनमें 'मन्द साधक' वह होता है, जो विषय वासनाओं में फँसा होने पर योगमार्ग पर अग्रसर होने का इच्छुक होता है। इसे 'आरुरुक्षु' भी कहा जाता है। अष्टांगयोग साधना में निरत गृहस्थ इस कोटि में आता है (कुमारी, 1981, पृ. 60)। 'मध्यम अधिकारी' (युंजान) वह होता है जो संसार से विरक्त होकर तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान रूप क्रियायोग साधना में संलग्न रहता है। वानप्रस्थ आश्रमधर्म का पालक इस कोटि का साधक कहा जा सकता है (कुमारी, 1981, पृ.50)। 'उत्तम साधक' (योगारूढ़) वह व्यक्ति है, जो सभी काम संकल्पों को छोड़ चुका है (श्रीमद्भगवदगीता, 6/4)। ऐसे साधक के लिए अभ्यास और वैराग्य साधना का उपदेश दिया गया है। उक्त साधक पूर्वजन्म में की गई बहिरंग साधना के कारण साधना मार्ग में सर्वाग्रणी माना गया है। व्यास और भोज ने उत्तम साधक के लिए समाहितचित्त तथा मध्यम और मन्दसाधक के लिए व्युत्थितचित्त शब्द का प्रयोग किया है (व्यासभाष्य, अवतरणिका, सूत्र– 2/1; भोजवृत्ति, अवतरणिका, सूत्र– 2/1)।

पातंजल योगसूत्र के अनुसार योग साधना में 'उपायप्रत्यय' नामक प्रथम कोटि का अधिकारी होने के लिए कुछ गुण अपेक्षित हैं। यथा– योग साधना के प्रति श्रद्धा (आस्तिकता व सम्मान) वीर्य (अभिरुचि एवं उत्साह), स्मृति (अपने लक्ष्य एवं गन्तव्य मार्ग का अविस्मरण), समाधि (एकाग्रता की सामर्थ्य) और प्रज्ञा (हेयोपादेय विवेक से युक्त बुद्धि) (पातंजल योग सूत्र, 1/20)। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उक्त गुणों की अपेक्षा का निरुपण ऐसे व्यक्तियों को लक्ष्य करके किया गया है, जो पूर्वजन्म में साधना की विशिष्ट कोटि में पहुँच गए थे किन्तु लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाये। ऐसे योग भ्रष्ट व्यक्ति को अगले जन्म में पूर्व जन्म के विशिष्ट संस्कार स्वतः प्राप्त होते हैं। उनके लिए उक्त गुणों की अनिवार्यता नहीं है, क्योंकि श्रद्धा आदि गुणों की सिद्धि वे अपने पूर्व जन्म में ही कर चुके होते हैं। ऐसे साधकों को पातंजल योगसूत्र में भवप्रत्यय और उनसे भिन्न सामान्य साधकों

को उपायप्रत्यय नाम से अभिहित किया गया है। सामान्यतः इन दोनों साधकों में मुख्य अन्तर यह होता है कि जहाँ उपायप्रत्यय साधक व्युत्थितचित्त होता है और उसे चित्त की एकाग्रता एवं समाधि की सिद्धि के लिए विशिष्ट प्रयास करना पड़ता है, वहाँ भवप्रत्यय साधक स्वतः समाहितचित्त होता है और सम्प्रज्ञात समाधि की प्राप्ति उसके लिए शत प्रतिशत संभव होती है (पातंजल योग सूत्र, 1/19)।

पातंजल योगसूत्र में बाह्य चर का नियन्त्रण

विभिन्न विघ्नों से साधना मार्ग में आने वाली समस्याओं और साधना मार्ग में आने वाली बाधाओं को बाह्य चर के रूप में, योग अन्तराय (पातंजल योग सूत्र, 1/30–31) और पंच क्लेश (पातंजल योग सूत्र, 2/3) का वर्णन करते हैं और उनके नियन्त्रण हेतु साधना मार्ग में आने वाले विघ्नों के समाधान हेतु महर्षि पतंजलि विभिन्न प्रक्रियाओं का वर्णन करते हैं जिनका वर्णन इस प्रकार है–

महर्षि पतंजलि बाह्य चर योग अन्तराय के नियन्त्रण हेतु विभिन्न चित्त प्रसादन के उपाय बताते हैं। वे हैं– (1). चार भावनाएँ (पातंजल योग सूत्र, 1/33), (2). प्राणायाम (पातंजल योग सूत्र, 1/34) (3). दिव्य विषय (पातंजल योग सूत्र, 1/35), (4). ज्योतिष्मती (पातंजल योग सूत्र, 1/36), (5). वीतराग पुरूषों का ध्यान (पातंजल योग सूत्र, 1/37), (6). स्वप्न और निद्रा (पातंजल योग सूत्र, 1/38) (7). जिसकी जैसी मान्यता वैसा ध्यान (पातंजल योग सूत्र, 1/39)। इसी प्रकार महर्षि पतंजलि क्लेश के रूप में आने वाली बाधाओं का समाधान प्रस्तुत करते हुये कहते हैं कि इन क्लेशों की सूक्ष्म वृत्ति चित्त को अपने कारण में विलीन करने से होती है (पातंजल योग सूत्र, 2/10), और इनकी स्थूल वृत्ति का समापन ध्यान के द्वारा होता है (पातंजल योग सूत्र, 2/11)। इन क्लेशों का मूल कारण वह अविद्या को बताते हैं (पातंजल योग सूत्र, 2/4)। इन क्लेशों से घनीभूत कर्मों को वर्तमान जीवन और भविष्य के जीवन में भोगना है ऐसा वह स्पष्ट करते हैं (पातंजल योग सूत्र, 2/12)। वह स्पष्ट करते हैं कि जब तक इन कर्म संस्कारों का मूल समाप्त नहीं हो जाता है तब तक इन्हें भोगना पड़ेगा (पातंजल योग सूत्र, 2/13)। महर्षि पतंजलि एक महत्वपूर्ण सूत्र यहाँ देते हैं कि कर्म का संस्कार सुख और दुःख दोनों देने वाला होता है (पातंजल योग सूत्र, 2/14) परन्तु विवेकी के लिए सब दुःख स्वरूप है (पातंजल योग सूत्र, 2/15)। वह नियन्त्रित चर के रूप में कर्मों की व्याख्या करते हैं। उनके अनुसार यदि साधन मार्ग में साधक प्रवृत्त है परन्तु वह कर्म के संस्कारों में उलझता जा रहा है तो उसकी गति स्थिर हो सकती है अथवा वह पतन की ओर जा सकता है। अतः अध्यात्म के प्रयोगकर्ता के लिए कर्मों का निर्धारण अत्यन्त आवश्यक है। यह प्राचीन समय से लेकर आधुनिक समाज के विभिन्न उदाहरणों के माध्यम से देखा जा सकता है कि किस प्रकार अध्यात्म के उच्च सोपानों पर स्थित– विश्वामित्र जैसे तपस्वी अपने स्थान से अधोगामी हो जाते हैं इसी प्रकार की विभिन्न घटनाएँ वर्तमान समय में अक्सर समय–समय पर विभिन्न समाचार माध्यमों से प्राप्त होती हैं कि किस प्रकार कोई साधक अपने कर्मों के कारण अपना सम्मान और प्रतिष्ठा खो देता है। अतः नियन्त्रण के रूप में वह कर्मों को नियन्त्रित करने की बात करते हैं। यहाँ यदि हम गीता की भाषा में समझने का प्रयास करें तो यथोचित परिणाम के लिए निष्काम कर्म का सुझाव देते हैं। वह यथोचित परिणाम हेतु यह निर्देश देते हैं कि साधना में निमग्न साधक के उन्नत अवस्था में जाने पर लोकपाल देवताओं के बुलाने पर न तो उनके भोगों में राग करना चाहिए और न अभिमान करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से पुनः अनिष्ट संभव है (पातंजल योग सूत्र, 3/51)।

पातंजल योगसूत्र में वर्णित अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया के परिणाम और उनकी व्याख्या

महर्षि पतंजलि प्रत्येक तकनीक को वर्णित करने के पश्चात उसके परिणामों का वर्णन करते हैं। वह प्रक्रिया के प्रारम्भ, मध्य और अन्त में प्राप्त परिणामों का वर्णन करते हैं, परन्तु उनका निश्चित लक्ष्य निर्धारित है– कैवल्य। वह उस कैवल्य की अवस्था से पूर्व प्राप्त होने वाले परिणामों का भी क्रमशः वर्णन विभिन्न विभूतियों के रूप में करते हैं। पांतजल योग सूत्र में वर्णित विभिन्न तकनीकों के प्रयोग से प्राप्त परिणामों की व्याख्या महर्षि पतंजलि बहुत ही अद्भुत ढंग से करते हैं। जिसको संक्षिप्त में हम इस प्रकार समझ सकते हैं। महर्षि पतंजलि अध्यात्म की चरम अवस्था को प्राप्त स्थिति का वर्णन करते हैं, उसके चित्त की स्थिति बताते हैं, उसके कर्मों की स्थिति बताते हैं (पातंजल योग सूत्र, 4/7)। इसके साथ–साथ वह साधारण रुप में अस्मिता से नियन्त्रित चित्त की अवस्था को प्रस्तुत करते हैं (पातंजल योग सूत्र, 4/5)। वह साधारण मनुष्यों में संस्कारों के स्वरूप व उसके कारण पड़ने वाले प्रभाव (पातंजल योग सूत्र, 4/8, 9, 10) का वर्णन कर चित्त के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन करने के पश्चात स्पष्ट करते हैं कि चित्त और आत्मा के भेद को प्रत्यक्ष कर लेने से आत्मभावविषयक भावना सर्वथा निवृत्त हो जाती है (पातंजल योग सूत्र, 2/25) और अध्यात्म मार्ग में प्रवृत्त साधक का चित्त विवेक में झुका हुआ कैवल्य के अभिमुख हो जाता है (पातंजल योग सूत्र, 2/26)। इस विवेकज्ञान की महिमा में भी वैराग्य से धर्ममेघ समाधि प्राप्त हो जाती है (पातंजल योग सूत्र, 4/29)। और इस धर्ममेघ समाधि से समस्त क्लेश और कर्मों की निवृत्ति हो जाती है (पातंजल योग सूत्र, 4/30)। इस अवस्था में चित्त पूर्णतः निर्मल और पवित्र अवस्था को प्राप्त होता है (पातंजल योग सूत्र, 4/31), तथा अपने कार्य को समाप्त कर चुके गुणों के परिणाम क्रम की समाप्ति हो जाती है (पातंजल योग सूत्र, 4/32), और समस्त गुण अपने

कारण में विलीन होते हैं व कैवल्य अवस्था की प्राप्ति होती है अर्थात् द्रष्टा अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाता है (पातंजल योग सूत्र, 4/34)। इस प्रकार हम देखते हैं कि महर्षि पतंजलि जिस परिकल्पना को प्रारम्भ करते हैं, उसे प्रयोगात्मक ढंग से तर्क, तथ्य और प्रयोग की कसौटी पर उतारकर सिद्ध करते हैं। यही है महर्षि पतंजलि द्वारा वर्णित अध्यात्म की वैज्ञानिक प्रक्रिया।

निष्कर्ष

महर्षि पतंजलि अपने योगसूत्रों में एक वैज्ञानिक की भाँति आध्यात्मिक तकनीकों को इस प्रकार प्रयोगात्मक ढंग से वर्णित करते हैं कि किसी भी तर्कशील वैज्ञानिक मन के समक्ष प्रयोग से पूर्व कुछ कहने के लिए शेष नहीं रहता है। जिस प्रकार गणित, भौतिक, रासायनिक विज्ञान के नियम जगत के सत्य हैं उसी प्रकार महर्षि पतंजलि आध्यात्मिक नियमों को जगत का सत्य सिद्ध करते हैं। वह योगसूत्रों में वर्णित तकनीकों का व्यक्तित्व के प्रत्येक स्तर– शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक उन्नति के लिए वर्णन करते हैं। इन तकनीकों को प्रयोग कर कोई भी वह सार्थक लाभ प्राप्त कर सकता है जिसका वर्णन उन्होंने उन तकनीकों के परिणामों के रूप में वर्णित किया है। वह मात्र परिणामों को स्पष्ट ही नहीं करते हैं, वरन् उन परिणामों की प्रप्ति में आने वाली बाधाओं को भी स्पष्ट रूप से वर्णित करते हैं। उनकी बताई गई इस वैज्ञानिक विधि के अन्तर्गत ऐसे सूत्रों का प्रतिपादन हैं जो सत्य हैं वैज्ञानिक नियमों अनुशासन की भाँति। इन सूत्रों का कोई भी व्यक्ति जिस स्तर से अर्थात जिस तकनीकी से प्रयोग प्रारम्भ करेगा वह निश्चित वही यथेष्ट परिणाम की प्राप्ति करेगा जो उस परिणाम के रूप में महर्षि पतंजलि ने वर्णित किया है। इन परिणामों के साथ पतंजलि कर्मों की महत्ता भी विकास के लिए उन्नति के लिए बताते है क्योंकि कर्म ही हमें जन्म मरण के चक्र में बाधनें वाले हैं। इसलिए महर्षि पतंजलि स्पष्ट करते हैं कि अध्यात्म के प्रयोगकर्ता को पाप–पुण्य से रहित कर्म करने चाहिए अर्थात् बन्धन से मुक्त करने वाले कर्म करने चाहिए। जिसने कर्मों के इस विज्ञान को समझ लिया वह महर्षि के उन शिखरों को स्पर्श कर पाया है जिसे उन्होंने कैवल्य का नाम दिया है।

असीम कुलश्रेष्ठ, पी–एच0डी0, योग शिक्षक, गुरूदेव टैगोर भारतीय संस्कृति केन्द्र, भारत का राजदूतावास, मेक्सिको।

संदर्भ सूची

पातंजल योग सूत्र– 1/1–6, 19–20, 30–39

पातंजल योग सूत्र– 2/3–4, 10–15, 20

पातंजल योग सूत्र– 3/51, 55

पातंजल योग सूत्र– 4/5, 7–10, 25–26, 29–32, 34

नागोजी भट्टवृत्ति– 2/1

श्रीमद्भगवदगीता– 6/4

व्यासभाष्य, अवतरणिका, सूत्र– 2/1

भोजवृत्ति, अवतरणिका, सूत्र– 2/1

आचार्य, श्रीराम शर्मा (1989 फरवरी). सत्य हमारे आचरण में उतरे। *अखण्ड ज्योति, 52* (2), 20.

ओशो (1998). *पतंजलि योग सूत्र (भाग–1)।* पुण– ताओ पब्लिसिंग प्रा. लि।

विवेकानन्द, स्वामी (2000). *विवेकानन्द साहित्य (खण्ड –1)।* पिथैरागढ– अद्वैत आश्रम।

कुमारी, पवन (1981). *विज्ञानभिक्षुप्रणीतः योगसारसंग्रह।* दिल्ली– ईस्टर्न बुक लिंकर्स।

तीर्थ, स्वामी ओमानन्द (2005). *पातंजलयोगप्रदीप।* गोरखपुर– गीता प्रेस।

पंडया, प्रणव (2006). *अर्न्तजगत की यात्रा का ज्ञान विज्ञान।* हरिद्वार– वेदमाता गायत्री ट्रस्ट।

त्रिपाठी, लाल बच्चन (1995). *मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान पद्धतियाँ।* आगरा– हर प्रसाद भार्गव।